जन आन्दोलन और गाँधी रणनीति

डॉ. शिखा अग्रवाल
व्याख्याता, राजनीति विज्ञान, राजकीय बांगड महाविधालय, डीडवाना-341303 (जिला- नागौर), राजस्थान

भारतीय राजनीति में गाँधी के प्रवेश से पूर्व आन्दोलनों को राष्ट्रीय जनाधार प्राप्त नहीं था। गाँधी से पूर्व तिलक ने इस दिशा में कार्य किया था और वे जन सहभागिता प्राप्ति में सफल भी रहे थे, लेकिन उन्होंने धार्मिक आधार का सहारा लिया था। गाँधी का भारतीय राजनीति में प्रवेश क्रान्तिकारी व नए युग का द्वार खोलने वाली घटना थी। गाँधी जन मनोविज्ञान व राजनीतिक स्थिति की गहरी समझ रखते थे, जिसके आधार पर, उन्होंने एक कमजोर भारत को शक्तिशाली भारत में रूपान्तरित कर दिया। यहाँ गाँधी की 'आन्दोलन राजनीति' का विश्लेषण करने का प्रयास किया जा रहा है, जिसने अब तक चली आ रही उच्च वर्गीय या कौंसिल राजनीति को जनाधारित राजनीति में परिवर्तित कर दिया। डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार, गाँधी की आवाज सुदूर गाँवों में झोंपडियों में भी पहुंच गई थी। गाँधी के आन्दोलनों की शक्ति से सरकार भी दुविधा में पड़ गई थी, क्योंकि भयंकर तानाशाह भी शान्तिपूर्ण ढंग से प्रतिरोध करने वाली विशाल जन सेवा को तोप की नली से नहीं उड़ा सकता। यदि सरकार आन्दोलन को नहीं दबाती तो जनता पर उसकी पकड़ ढीली होती और यदि दबाती तो जन विरोधी नृशंस सरकार की छवि बनती। सरकार को इस दुविधा में डालने का श्रेय गाँधी की अहिंसक रणनीत को ही दिया जा सकता है।

दक्षिणी अफ्रीका का अनुभव-

दक्षिण अफ्रीका में गरीब भारतीयों के जुझारूपन को देखकर गाँधी को यह विश्वास हो गया था कि भारतीय जनता किसी व्यापक लक्ष्य के लिए जुझारू संघर्ष और बलिदान के लिए तैयार हो जाएगी। यहाँ उन्होंने अनेक समुदायों और धर्मों के नेतृत्व का अनुभव प्राप्त किया। दक्षिण अफ्रीका में गाँधी को विरोधी राजनीतिक धाराओं के वातावरण में एक विशिष्ट राजनीति शैली, नेतृत्व के अंदाज और संघर्ष के नए तरीकों को विकसित करने का मौका मिला। अब उनके सामने चुनौती थी, इस रणनीति को भारतीय राजनीति की भूमि पर आजमाना।[1]

गाँधी का भारतीय राजनीति में प्रवेश-

जिस समय गाँधी ने भारतीय राजनीति में पदार्पण किया, देश लगभग नेतृत्व-विहीन था। भारतीय जनता दक्षिण अफ्रीका में उनकी सफलता पर मुग्ध थी। साधारण जनता उन्हें एकदम निर्भीक व ईमानदार समझती थी। संन्यासियों की भाँति गाँधी के जीवन के लिए जनता के हृदय में आदर का भाव था। उनमें किसी प्रकार की कमजोरियों न थीं, उनमें कुछ अनोखापन और ताजगी थी।[2] उनकी सादगीपूर्ण जीवन शैली के कारण प्रत्येक व्यक्ति उनसे निकटता अनुभव करता था और उनके इसी गुण व सहज व्यवहार में उन्हें करिश्माई नेतृत्व प्रदान किया।

उनके समकालीन राजनीतिज्ञों में वे ऐसे दूरदर्शी और विवेकशील राजनीतिज्ञ थे जैसे इतिहास में कम ही मिलते हैं। अपने कार्य के मूल तत्त्वों की उन्हें अच्छी पकड़ थी। वे ऐसी परिस्थितियों को तत्काल पहचान लेते थे, जिनका हल संवैधानिक या आतंकवादी की अपेक्षा सक्रिय उपायों से ही संभव था। यदि आतंकवादी तरीके सफल भी हो जाएँ तो इससे अधिनायकवाद या प्रतिक्रान्ति की संभावना अधिक रहती है। इसके अतिरिक्त भारत को सांस्कृतिक व दार्शनिक पृष्ठभूमि को दृष्टिगत रखते हुए भी अहिंसक आन्दोलन का मार्ग ही भारत के लिए उन्हें सर्वाधिक उपयुक्त प्रतीत हुआ।

चंपारण आन्दोलन में गाँधी को अपनी राजनीति के प्रयोग का भारत में प्रथम अवसर प्राप्त हुआ, जिसमें सत्याग्रह व शांतिपूर्ण प्रतिरोध सम्मिलित था। चंपारण के बाद, अहमदाबाद व खेड़ा आन्दोलन के संघर्ष ने गांधीवादी तरीकों को अवसर प्रदान किया। गाँधी को जनता की ताकत और कमजोरियों का पता चला, उनकी रणनीति कारगर साबित हो सकती है, इसका अनुमान लगाने का मौका मिला, बहुत सारे राजनीतिक कार्यकर्ता विशेषकर युवा पीढ़ी, विशेषकर साहित्यकार उनको श्रद्धा की नजर से देखने लगी और इस दौरान गांधी ने भारतीय जनता के बीच अपनी पहचान बना ली।[3] यहाँ 1920 से 1947 तक के काल में, जिसे गाँधी युग कहा जाता है, का गाँधी की नेतृत्व क्षमता व जन सहभागिता के संदर्भ में विश्लेषण करने का प्रयास किया जा रहा है।

असहयोग आन्दोलन व जन आन्दोलन तकनीक-

इस समय प्रथन महायुद्ध के कारण बढ़ती महंगाई, खाद्यान्न को कमी व मुद्रा स्फीति के कारण जनता अंग्रेजी शासन से रुष्ट थी। अतः आवश्यकता थी, विरोध व रोष की इस ऊर्जा को सही दिशा देने की। 1 अगस्त, 1920 को असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ हुआ, गाँधी ने वायसराय को नोटिस दिया "कुशासन करने वाले शासक को सहयोग देने से इंकार करने का अधिकार हर आदमी को है।" गाँधी जानते थे कि किसी आन्दोलन को लंबे समय तक चलाने हेतु कोई ऐसी समिति होनी चाहिए, जो साल भर कार्य करती रहे। कस्बों और गाँवों में भी कांग्रेस समितियाँ गठित की गईं। सदस्यता शुल्क चार आना कर दिया गया। इस तरह कांग्रेस संगठन का दायरा बढ़ा और उनका विकेन्द्रीकरण भी हुआ। नए कार्यक्रमों की क्रियान्विति हेतु, कांग्रेस के संगठनात्मक ढाँचे में भी कई परिवर्तन किए गए, उद्देश्य भी बदल गया। जहाँ तक संभव हो हिन्दी का सम्पर्क भाषा के रूप में प्रयोग करने का निश्चय किया गया। इस आन्दोलन में विदेशी उपाधियों, स्कूलों, कॉलेजों, अदालतों, नौकरियों का बहिष्कार किया गया। इस आन्दोलन में सर्वाधिक सफल था, विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार का कार्यक्रम।

चौरा-चौरी कांड व आन्दोलन वापिस लेना-

जब आन्दोलन अपने चरम पर था, इस हिंसक घटना के कारण, आन्दोलन वापिस लेकर गाँधी ने जहाँ राजनीति में उच्च नैतिक मानदण्ड स्थापित किए एवं साध्य के साथ ही साधनों की पवित्रता के सिद्धान्त को क्रियान्वित करके दिखाया, वहीं राष्ट्रव्यापी विवाद खड़ा कर दिया। असहयोग आन्दोलन वापिस लेने के पीछे गाँधी का लक्ष्य आंदोलन की ऊर्जा को बचाए रखना व जनता को हतोत्साहित होने से बचाना था। 1921 के वर्ष के प्रारंभ में सम्पूर्ण देश में जो उत्साह था, वह बाद में नहीं रह गया था, इस प्रकार आन्दोलन कमजोर पड़ने लगा था। गाँधी के आलोचक अक्सर यह भूल जाते ते हैं कि कोई भी आन्दोलन लगातार नहीं चलता। उसमें पड़ाव आता है। इसका मूल कारण यह है कि जनता की दमन सहने व बलिदान करने की शक्ति असीमित नहीं होती। आन्दोलन को वापिस लेना विश्वासघात नहीं हुआ, यह तो राजनीति का एक हिस्सा है।[4] गाँधी सिद्धहस्त राजनीतिज्ञ थे। वे यह बात अच्छी तरह जानते थे कि कब आगे बढ़ना चाहिए और कब दम लेना चाहिए। जनता के रोष का देशव्यापी आन्दोलन के रूप में ही नहीं, बल्कि किसी रचनात्मक कार्य के लिए उपयोग करना था। गाँधी जी ने दोनों काम किए।[5]

सविनय अवज्ञा आन्दोलन-

1930 की मध्य फरवरी में आन्दोलन प्रारम्भ करने का अधिकार गाँधी को दिया गया। गाँधी जन आन्दोलन के विशेषज्ञ थे, उन्होंने नमक को आन्दोलन का आधार बनाया, डांडी यात्रा का निश्चय किया गया, पद-यात्रा के माध्मय से जन-जन से जुड़ाव व सहभागिता प्राप्ति इसका लक्ष्य थी। इसकी योजना बहुत समझदारी से बनाई गई थी क्योंकि नमक एक ऐसा मुद्दा था, जिससे प्रत्येक भारतवासी प्रभावित था। प्रारंभ में सरकार भी इसके दूरगामी प्रभावों को नहीं समझ पायी थी और गाँधी का उपहास किया गया था।

सरकार की सोच-

वस्तुतः सरकार को पता नहीं था कि आन्दोलन के प्रति क्या रवैया अपनाए। यदि सरकार आन्दोलन नहीं दबाती तो जनता पर पकड़ ढीली पड़ जाती और यदि दबाती तो जन विरोधी नृशंस सरकार की छवि बनती है। सरकार को इस दुविधा में डालने हेतु ही गांधीजी ने अहिंसात्मक सविनय अवज्ञा आन्दोलन की रणनीति बनाई थी।[6]

उचित समय पर आन्दोलन प्रारम्भ और समाप्त करना-

यदि गाँधी ने नमक सत्याग्रह उचित समय पर प्रारम्भ न किया होता तो देश के राजनीतिक उत्थान की कौन कहे, सूरत की भाँति उस समय भी कांग्रेस के दो दल हो गए होते। गाँधी जी ने नमक सत्याग्रह के द्वारा आतंकवादियों के स्वतन्त्रता की लड़ाई में सम्मानजनक व देशभक्तिपूर्ण स्थान देकर उन्हें बलिदान और त्याग की अपनी भूख मिटाने का अवसर दिया। फलस्वरूप देश में आतंकवाद का प्रभाव समाप्त हो गया।[7] गाँधी जी अनुभव कर रहे थे कि उनके सैनिकों का दम भर आया है, इसलिए वे प्रतिद्वंद्वियों द्वारा प्रस्तावित समझौते के लिए तैयार हो गए, बशर्ते कि शर्तें सम्मानजनक हों। उन्होंने चतुराई से भाँप लिया कि सरकार द्वारा प्रेषित शांति का प्रस्ताव ही इनकी सबसे बड़ी विजय है। अतः शीघ्र ही गाँधी-इरविन समझौते पर हस्ताक्षर हो गए।[8] सत्य यह है कि जन आन्दोलनों की आयु बहुत लम्बी नहीं होती। सक्रिय राजनीतिज्ञों की भाँति आम जनता की त्याग की क्षमता अनन्त नहीं होती। 1931 का वर्ष 1946 की भाँति नहीं था, सरकार तेजी से दमन-चक्र चलाकर, काफी प्रभावी तरीके से आन्दोलन कुचल देती।[9]

भारत छोड़ो आन्दोलन-

मार्च, 1942 में क्रिप्स मिशन की विफलता से यह स्पष्ट हो गया था कि ब्रिटिश सरकार युद्ध में भारत की अनिच्छुक साझेदारी को तो बरकरार रखना चाहती है लेकिन किसी सम्मानजनक समझौते के लिए तैयार नहीं है। अब संघर्ष अपरिहार्य होता जा रहा था, क्योंकि युद्ध के कारण बढ़ती कीमतों और जरूरी वस्तुओं के अभाव से जन साधारण में असंतोष व्याप्त था। गाँधी ने इसी असंतोष का प्रतिकार करने के लिए 'करो या मरो' का शक्तिशाली मंत्र प्रदान किया, जिससे संपूर्ण देश में चेतना का संचार हुआ। इस आन्दोलन में जन सहभागिता, पराकाष्ठा पर पहुँच गई। मुस्लिम सहभागिता यद्यपि उल्लेखनीय नहीं रहीं लेकिन इसमें भी सन्देह है कि मुस्लिम लीग के समर्थकों ने भी मुखबिरी नहीं की, बल्कि जरूरत पड़ने पर भूमिगत कार्यकर्ताओं को शरण ही दी। कहीं कोई साम्प्रदायिक दंगा नहीं हुआ। इस ऐतिहासिक अन्दोलन की एक उपलब्धि यह थी कि इसके द्वारा आजादी की मांग राष्ट्रीय आन्दोलन की पहली मांग बन गई।

जन-आन्दोलन राजनीति का विश्लेषण-

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में अपनाई गई रणनीति के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि उन्होंने आन्दोलनात्मक व रचनात्मक दो स्तरों पर कार्य किया, जिससे देश को तात्कालिक व दूरगामी दोनों प्रकार के लाभ प्राप्त हुए। यद्यपि उपरोक्त विवरण में आन्दोलनों के साथ ही रणनीति का विश्लेषण किया गया है परन्तु कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण बिन्दु भी हैं जो उल्लेखनीय हैं-

1. योग्य सेनापति की भाँति पहल करने का अधिकार सुरक्षित रखना-अपनी तकनीक के संबंध में गाँधी ने लिखा है "योग्य सेनापति लड़ाई के मैदान व लड़ाई के समय का चुनाव अपनी पसन्द से करता है। इन मामलों में पहल वह हमेशा खुद करता है।" तीनों प्रमुख आन्दोलन इसका प्रमाण हैं।

2. जन सहभागिता व व्यापक जनाधार किसी भी आन्दोलन की सफलता के लिए व्यापक जनाधार की आवश्यकता होती है केवल मुट्ठी भर राजनैतिक कार्यकर्ताओं की नहीं। भारत का निर्धन व अशिक्षित मामीण भी जो अब तक ब्रिटिश सरकार से डरता था, निर्भीक और साहसी बन गया और आन्दोलन में सक्रिय सहभागी हुआ। प्रथम बार महिलाएँ आन्दोलन में सम्मिलत हुई। उन्होंने भारत के ग्रामवासी को प्रथम बार अपनी शक्ति का स्रोत बनाया।

यद्यपि किसी भी जन आन्दोलन के लिए 'स्थायी-सेना' या पूर्णकालिक राजनीतिक कार्यकर्ताओं के 'इस्पाती ढाँचे' की जरूरत होती है, किन्तु वह न तो सिर्फ उनके द्वारा छेड़ा जा सकता है न ही उन पर आश्रित होकर चल सकता है। आधात करने की उसकी क्षमता तो जनता के बीच से ही आती है।[10]

3. अहिंसक आन्दोलन-राष्ट्रीय आन्दोलन की अहिंसक रणनीति हमेशा विजय की ओर ले जाने वाली थी, क्योंकि ब्रिटिश सत्ता के पास अहिंसक व व्यापक जनाधार वाले आन्दोलन का कोई जवाब नहीं था। अहिंसक संघर्ष के कारण वे लोग भी स्वतन्त्रता आन्दोलन में हिस्सा ले सके, जो हिंसक संघर्षों में इस प्रकार भाग नहीं ले सकते थे। महिलाओं के संबंध में यह बात विशेषकर सच है। लेकिन अहिंसा का सबसे बड़ा महत्व यह था कि वह संघर्ष को एक नैतिक आधार देती थी। अहिंसक जनान्दोलनों ने औपनिवेशिक अधिकारियों का पर्दाफाश कर दिया, क्योंकि वे जब शांतिपूर्वक सत्याग्रहों पर हथियार का प्रयोग करते तो यह उजागर हो जाता कि ब्रिटिश सत्ता का वास्तविक आधार क्या है।[11] अहिंसक आन्दोलन इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण था कि निःशस्त्र जनता के पास उपाय भी क्या शेष था। औपनिवेशिक राज्य ने 1858 में ही बड़े योजनाबद्ध तरीके से भारतीय जनता को हथियार-विहीन कर दिया था। भारत विश्व में एक मात्र ऐसा देश है जहाँ अहिंसक आन्दोलन से स्वतन्त्रता के लक्ष्य की ओर सम्पूर्ण जनता के सहयोग से प्रयास किया गया।

4. भारत के चरित्र सामथ्र्य व आंतरिक वातावरण को बदलना-गाँधी की भारत को सबसे बड़ी देन का संबंध, भारत के चरित्र व उसकी सामर्थ्य को बदलने से है। गाँधी का नेतृत्व व्यक्ति के अंतर से, आत्मविश्वास की स्थापना से जुड़ा हुआ है। समाज की बुराइयों को दूर करने के लिए, लोगों के दिल और दिमाग को बदलने की आवश्यकता पड़ती है न कि नियमों और कानून की, गाँधी ने इसे आंतरिक वातावरण कड़ा है। यह आंतरिक वातावरण ही किसी जन आन्दोलन की निधि है। जिससे समझदारी व मजबूती से कार्य करने की क्षमता आती है। जो संकट के समय बहुत आवश्यक है।[12]

5. रचनात्मक कार्यक्रम की भूमिका प्रत्येक जनान्दोलन में एक बुनियादी समस्या यह होती है कि संघर्ष के उस दौर में, जब आन्दोलन सक्रिय न हो, कार्यकर्ताओं में सक्रियता कैसे पैदा की जाए। जनान्दोलन के माहौल में जो उत्साह और आन्दोलन पैदा होता है वह नदारद हो जाता है और राजनैतिक कार्यकर्ता निरुत्साहित होने लगते हैं। इस स्थिति का मुकाबला करने के लिए रचनात्मक कार्यक्रम रामबाण औषधि प्रमाणित हुआ। रचनात्मक कार्यक्रम से जो लोग गहराई से जुड़ते थे वे ही आगे चलकर आन्दोलन के सक्रिय कार्यकर्ता बन जाते थे।

6. युवा व अनुभवी नेतृत्व के विरोध की समाप्ति गांधी ने पुराने और नए नेताओं के बीच की खाई को भी पाट दिया। नए नेताओं के निर्माण में उनका विशेष हाथ था। जब वे शासन के प्रति विद्रोह के लक्षण देखते तो समझ लेते कि अब उनका बालक बालिग हो गया है और तब तत्काल वे उसे कोई स्वतंत्र काम सौंप देते क्योंकि जवानी में विवेक से अधिक उत्साह होता है।

7. समन्वयवादी दृष्टि व सबको साथ लेकर चलना स्वतन्त्रता की लड़ाई में पार्टी उम्र, दक्षिण पंथ, वामपंथ, नरम दल, गरम दल किसी प्रकार के भेद की गुंजाईश न थी। विभिन्न विरोधी मत-मतांतरों के उत्साही लोगों को एक मंच पर खड़ा करना गाँधी के आन्दोलन की विशिष्टता थी।

गाँधी के आन्दोलनों के राष्ट्रवाद के संदेश को हरिजनों तक पहुँचाया, उस वर्ग तक जिसके अधिसंख्यक लोग खेतिहर मजदूर थे और धीरे-धीरे राष्ट्रीय आन्दोलन व किसान आन्दोलन से जुड़ते जा रहे थे।[13] वर्ग, जाति, वर्ण, शिक्षा, जन्म, धन, रंग, नगर, ग्राम, लिंग, धर्म किसी भी आधार पर गाँधी ने अलगाववादी राजनीति को प्रोत्साहित नहीं किया। यही कारण था कि उनके विरोधी भी उनके नेतृत्व में विश्वास करते थे और उनका सम्मान करते थे। वे इसी कारण कांग्रेस में विभाजन रोकने में समर्थ रहे व उदारवादी-उमवादी, यथा स्थितिवादी व यथा स्थिति विरोधी सब उनकी नीतियों में आस्था रखते थे। सी.आर. दास के शब्दों में महात्मा गाँधी ने हम लोगों के प्रति असीम स्नेह दिखाया

और एक वृत्त खींच दिया, जिसके द्वारा हम सब कांग्रेस के अन्दर आ गए। आज परिवर्तन समर्थक व परिवर्तन विरोधी, दोनों ही कांग्रेस के अभिन्न अंग हैं।[14]

निष्कर्ष

गांधी जनता की नब्ज को पहचानते थे, उसके हृदय के स्पंदन को सुनते थे। राजनीति की प्रत्येक लहर का सदुपयोग करने की उनमें क्षमता थी। वे अच्छी तरह जानते थे कि कब लड़ाई छेड़नी चाहिए, कब पैंतरा बदलना चाहिए तथा कब झुक जाना चाहिये, कब शत्रु की चुनौती को स्वीकार करना चाहिए, कब उसे टाल देना चाहिए।[15]

सन्दर्भ

1. विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, 1990, पृ. 147
2. जेबी कृपलानी, गाँधी एक राजनीतिक अध्ययन सर्व सेवा संघ, वाराणसी, पृ. 12
3. विपिन चन्द्र, वहीं, पृ. 151
4. वही, पृ. 164
5. आचार्य कृपलानी, गाँधी एक राजनीतिक अध्ययन्, पृ. 24
6. विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृ. 245
7. आचार्य कृपलानी, गाँधी एक राजनीतिक अध्ययन, पृ. 26
8. वही, पृ. 26-27
9. विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृ. 263
10. वही, पृ. 467
11. वही, पृ. 471
12. स्टेनली फ्लास्टरिक, वर्ण संघर्ष का गाँधीवादी उत्तर गांधी पुनः मूल्यांकन, संपा.विश्वनाथ, प्रज्ञा प्रकाशन, जयपुर 1969, पृ. 109
13. विपिन चन्द्र, पृ. 268
14. डॉ. प्रतिमा जैन, गाँधी चिंतन, राजस्थान हिन्दी प्रन्य अकादमी, पृ. 103
15. जे.बी. कृपलानी, गाँधी एक राजनीतिक अध्ययन, पृ. 62-63